THE TIMES OF INDIA

*Date: 26-08-24*

# Nicobar Questions

## *More thought must go into building a major project in a fragile ecosystem*

**TOI Editorials**

Are environment ministry's assurances about the impact of the Great Nicobar naval complex reassuring? The project, as envisaged, with an eye on crucial maritime chokepoint Malacca Strait, boasts geostrategic potential. It ensures India can control vital shipping lanes, protect sealanes of communication, counterbalance Beijing's expansion in Indian Ocean and curb Myanmar's poaching of marine resources. The national value of security imperatives aside, question often raised has been, do the benefits outweigh ecological and social costs, and the vulnerability of the project that'll sit atop a seismic zone? Concerns over conservation are inarguable. Priority must equally be to ensure security of the naval complex from earthquakes.

Ministry statements that no seismic activity like the 2004 great earthquake is expected in the region "for 420-750 years" are puzzling. Andaman and Nicobar Islands lie in a highly active tectonic zone, at the intersection of major plate boundaries. Given the area's seismic history and geology, probability of no significant seismic event over such a long period as 420-750 years is low, experts say. For seismology and disaster preparedness, scientists advise planning for the possibility of major events, rather than assuming they won't occur.

The fragile Galathea Bay ecosystem, the construction site, makes any large-scale development inherently damaging. The very construction over 30 years – building material, blasting, dredging, drilling, debris – will permanently alter the ecosystem, disrupt island's inhabitants' lives; influx of outsiders will drain its freshwater resources. Locals, Shompen and Nicobarese tribes, see themselves simply as caretakers of biodiversity and nurturers of nature – mangroves and coral reefs, nesting sites of leatherback turtles, the latter residents of Earth since the time of dinosaurs. But keep aside conservation concerns. Building complex, costly, critical naval infra in an area highly prone to natural disasters needs a second look.

THE HINDU

Date: 26-08-24

# Catalyst for change

## *The Hema Committee report should help reform the film industry*

**Editorial**

At different points of time, come events that have the potential to shape the future. Whether these catalysts fulfil that potential to the fullest extent or not is in the hands of the people in their vortex. The Justice K. Hema Committee report that studied the issues faced by women in cinema, could well be one such catalyst. The three-member committee was constituted in 2017, based on a petition submitted by the Kerala-based Women in Cinema Collective, and submitted its report two years later. It was released last week, several paragraphs redacted, and contains unsurprising and yet disturbing revelations about the state of affairs in the film industry — discrimination, exploitation and sexual harassment of women. The term 'casting couch', hatched in Hollywood, has become repugnantly accepted as a euphemism for sexual favours in exchange for a role in films. Justice Hema points out that making the exchange of sexual favours the passkey for entry into the field itself, and normalising it and conflating it with consensual sexual activity, makes the industry inherently exploitative. The report deals also with other inequities that disadvantage women in the industry, including the lack of essential facilities such as toilets, changing rooms, safe transportation, and accommodation at the shooting spot which are violative of the right to privacy; and discrimination in remuneration, and a lack of binding contractual agreements. These affect the range of women across the industry — actors, technicians, make-up artists, dancers, support staff, and particularly so, women lower in the pecking order.

The way ahead is not as murky as the hole that the film industry, here Malayalam, seems to find itself in. The government has decided to constitute a special investigation team to go into the accusations of harassment. While the government would do well to ignore the committee's recommendation on doing away with internal complaints committees for each film project, it must act on suggestions that call for provision of essential facilities and for structural reforms within the film industry, including professionalising it. Nothing will change unless the state gets involved meaningfully in creating an equitable work space for men and women, in an industry dominated by people with great power and money, who have so far refuted the existence of such a power cartel or have remained silent. Each of the issues raised must be taken cognisance of, and acted upon. As with the #MeToo movement, Justice Hema's report has the potential of being a catalyst to enable scores of women to speak up. It behoves the state to ensure that their complaints are not ignored, or worse still, used against them.

दैनिक जागरण

Date: 26-08-24

# यूपीएस की जरूरत

**संपादकीय**

सरकारी कर्मचारियों के लिए एकीकृत पेंशन योजना अर्थात यूपीएस लाकर केंद्र सरकार ने लाखों कर्मचारियों की एक पुरानी मांग को पूरा करने की दिशा में एक ठोस कदम उठाया है। ऐसा कोई कदम उठाया जाना इसलिए आवश्यक हो गया था, क्योंकि 2004 में लागू की गई नई पेंशन योजना यानी एनपीएस सरकारी कर्मचारियों के हितों की पूर्ति में सहायक नहीं बन रही थी और इसीलिए उसे लेकर असंतोष था। इसी असंतोष के चलते कुछ राजनीतिक दल पुरानी पेंशन योजना यानी ओपीएस लागू करने का वादा कर राजनीतिक लाभ लेने की कोशिश कर रहे थे, लेकिन यह संकीर्ण राजनीति ही थी और इसीलिए हिमाचल प्रदेश एवं कुछ अन्य राज्य सरकारों ने पुरानी पेंशन योजना लागू करने की जो घोषणा की, उस पर अमल नहीं कर सकीं। तथ्य यह भी है कि कांग्रेस को हिमाचल प्रदेश के अलावा अन्य कोई चुनावी लाभ भी नहीं मिला और यही कारण रहा कि लोकसभा चुनाव में कांग्रेस ने पुरानी पेंशन योजना को लेकर कहीं कोई वादा भी नहीं किया। यह आश्चर्यजनक है कि अब वही कांग्रेस यूपीएस को लेकर सरकार पर तंज कस रही है और इस योजना को सरकार का एक और यू टर्न बता रही है। स्पष्ट है कि कांग्रेस और विपक्ष के अन्य नेता यह भूल रहे हैं कि बहुत पहले वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने एक नई पेंशन योजना लाने का वादा किया था और इस संदर्भ में एक समिति भी गठित की थी।

यह अच्छा हुआ कि सरकार यूपीएस के रूप में एक ऐसी पेंशन योजना लाने में समर्थ रही जो सरकारी कर्मचारियों को भी संतुष्ट करेगी और सरकार के लिए बहुत अधिक बोझ भी नहीं साबित होगी। यह योजना इसलिए सरकारी कर्मचारियों को संतुष्ट करने वाली है, क्योंकि यह काफी कुछ पुरानी पेंशन योजना सरीखी है। अंतर केवल इतना है कि इस नई पेंशन योजना में कर्मचारियों को दस प्रतिशत योगदान देना होगा। इससे उन्हें कोई समस्या नहीं आने वाली, क्योंकि नई पेंशन योजना में भी वे इतना ही अंशदान देते थे, लेकिन उसमें कितनी पेंशन मिलेगी, इसे लेकर अनिश्चितता रहती थी। यह लगभग तय है कि राज्य सरकारें भी यूपीएस को अपनाना पसंद करेंगी और महाराष्ट्र सरकार ने तो इस दिशा में पहल भी कर दी है। सरकारी कर्मचारियों के पेंशन के एक जटिल मसले को सुलझाने के बाद केंद्र सरकार के लिए उचित होगा कि ईपीएस-95 को भी ऐसा रूप-स्वरूप देने की दिशा में आगे बढ़े जिससे निजी क्षेत्र के कर्मचारियों के हितों की भी पूर्ति हो। यूपीएस लाकर केंद्र सरकार ने केवल सरकारी कर्मचारियों की एक मांग ही नहीं पूरी की है, बल्कि संभावित राजनीतिक नुकसान से बचने का भी उपाय किया है। अब जब सरकारी कर्मचारियों के पेंशन हितों की रक्षा के लिए कदम उठा लिया गया है तब उनके लिए भी यह आवश्यक हो जाता है कि वे अपने कामकाज में जवाबदेही और जिम्मेदारी का परिचय दें। इससे कोई इनकार नहीं कर सकता कि सरकारी कामकाज के तौर-तरीके में सुधार की आवश्यकता है।

***Date: 26-08-24***

# रेवड़ी संस्कृति का बढ़ता रोग

**डॉ. जगदीप सिंह, ( लेखक राजनीतिशास्त्र के प्रोफेसर हैं )**

जम्मू-कश्मीर विधानसभा के चुनाव नजदीक आते ही राजनीतिक दल तैयारियों में जुट गए हैं। सभी अपना चुनावी घोषणापत्र जारी कर रहे हैं। घोषणापत्र वह दस्तावेज होता है, जो चुनाव लड़ने वाले सभी राजनीतिक दल जारी करते हैं। इसमें वे जनता के सामने अपने वादे रखते हैं। इसके जरिये बताते हैं कि वे चुनाव जीतने के बाद जनता के लिए क्या-क्या करेंगे? उनकी नीतियां क्या होंगी? सरकार किस तरह से चलाएंगे और उससे जनता को क्या फायदा मिलेगा? हालांकि वास्तविकता में घोषणापत्र वादों का पिटारा मात्र होता है। राजनीतिक दल लोगों के वोट पाने के लिए मुफ्त बिजली/पानी की आपूर्ति, बेरोजगारों, दैनिक वेतनभोगी श्रमिकों और महिलाओं को भत्ता, साथ-साथ गैजेट जैसे-लैपटाप, स्मार्टफोन आदि देने का वादा करते हैं, लेकिन ये कितने पूरे होते हैं, यह अलग चर्चा का विषय है।

जम्मू-कश्मीर की पूर्व मुख्यमंत्री और पीडीपी की अध्यक्ष महबूबा मुफ्ती ने 'पहचान की रक्षा, भविष्य की रक्षा' शीर्षक से अपना घोषणापत्र जारी किया है। इसमें उन्होंने वादा किया है कि पार्टी अनुच्छेद 370 को वापस लागू करेगी। साथ ही आमजन को खुश करने के लिए 200 यूनिट मुफ्त बिजली, मुफ्त पानी, गरीब परिवारों को वर्ष में 12 गैस सिलिंडर, वृद्धावस्था पेंशन, विधवा पेंशन को दोगुना करने का वादा किया है। वहीं नेशनल कांफ्रेंस (नेकां) ने अपने घोषणापत्र में कहा है कि पार्टी लोगों को 200 यूनिट तक बिजली मुफ्त देगी, अनुच्छेद 370 बहाल करेगी और जम्मू-कश्मीर को राज्य का दर्जा दिलाने के साथ-साथ 2000 में तत्कालीन विधानसभा द्वारा पारित स्वायत्तता संबंधी प्रस्ताव को लागू करेगी। जून 2000 में फारूक अब्दुल्ला के नेतृत्व वाली तत्कालीन नेकां सरकार ने राज्य में 1953 से पहले की संवैधानिक स्थिति को बहाल करने की मांग करते हुए विधानसभा में एक प्रस्ताव पारित किया था। हालांकि इस प्रकार जम्मू-कश्मीर के क्षेत्रीय दलों द्वारा 370 को पुन बहाल करने की बात करना राष्ट्रीय हित के अनुकूल नहीं है। देखा जाए तो जम्मू-कश्मीर की आर्थिक स्थिति पर्यटन उद्योग पर टिकी है और यहां रोजगार का यही सबसे बड़ा साधन है। बावजूद इसके इस महत्वपूर्ण क्षेत्र की समस्याओं का इन राजनीतिक दलों के घोषणापत्रों में शामिल न होना गंभीर चिंता का विषय है। आखिर कब तक पर्यटन उद्योग की अनदेखी होती रहेगी।

वैसे घोषणापत्र जारी करने की परंपरा दुनिया भर में है। आमतौर पर घोषणापत्र में आर्थिक और सामाजिक आदि मुद्दों पर पार्टी की नीतियों और कार्यक्रमों को पेश किया जाता है। अमेरिका जैसे देश में घोषणापत्र में आर्थिक-विदेश नीति, स्वास्थ्य की देखभाल, शासन में सुधार, पर्यावरण से जुड़े मुद्दों और इमिग्रेशन आदि को शामिल किया जाता है। वहां इनमें लोगों को किसी तरह के खास लाभ देने की बात नहीं की जाती है। भारत में राजनीतिक दल मुद्दों के साथ-साथ मुफ्त की रेवड़ियां तक को अपने घोषणापत्र में शामिल कर लेते हैं, जिसका मुद्दा सुप्रीम कोर्ट तक में उठ चुका है। पूर्व में सुप्रीम कोर्ट कह चुका है कि कोई भी मुफ्त वितरण सभी लोगों पर असर डालता है। ऐसे में निष्पक्ष और स्वतंत्र चुनाव नहीं हो पाते। साथ ही देश में ऐसा कोई प्रविधान भी नहीं है जिससे घोषणापत्रों में किए जाने वाले वादों को नियंत्रित किया जा सके। राजनीतिक पार्टियों को ऐसे वादों से बचना चाहिए, जो चुनावी प्रक्रिया की पवित्रता को कम कर सकते हैं या मतदाताओं पर गलत प्रभाव डाल सकते हैं। राजनीतिक दलों को अपने घोषणापत्रों में किए गए वादों की जरूरत को

भी बताना चाहिए। वही वादे करें, जो पूरे किए जा सकते हैं। यह भी बताएं कि इन वादों को पूरा करने के लिए वित्तीय जरूरतें किस तरह पूरी होंगी?

मुफ्त के वादे कर राजनीतिक दल लोगों को अपने पक्ष में मतदान करने के लिए एक प्रकार से रिश्वत दे रहे हैं। इसका आर्थिक पहलू यह है कि राजनीतिक दल सरकार के खर्चे पर मतदाताओं को मुफ्त उपहार दे रहे हैं, लेकिन क्या यह उस राज्य की आर्थिक स्थिति के लिहाज से उचित है? गत वर्ष श्रीलंका में घटी घटना इसका उदाहरण है। जानकारों का मानना है कि श्रीलंका के आर्थिक पतन का कारण वहां के राजनीतिक दलों द्वारा मतदाताओं को दिए गए मुफ्त उपहार रहे हैं। भारत के अधिकांश राज्यों की मजबूत वित्तीय स्थिति नहीं है एवं राजस्व के मामले में संसाधन भी बहुत सीमित हैं। दक्षिण भारत के राज्यों से शुरू हुई यह परंपरा धीरे-धीरे उत्तर भारत के राज्यों में फैलती जा रही है। कोई आय न होने के बाद भी मुफ्त की योजनाओं की घोषणा करना देश के आर्थिक स्वास्थ्य की दृष्टि से उचित नहीं है। आमदनी की कोई ठोस योजना न होने के बाद भी राजनीतिक दल भारी-भरकम घोषणाएं कर जनता को छलने का कार्य करते हैं। किसी वर्ग विशेष को मुफ्त की योजनाएं देकर जनता पर टैक्स का भार डाला जाता है। मुफ्त में सुविधाएं, उपहार देने से अंततः सरकारी खजाने पर असर पड़ता है। यह एक गलत परंपरा है। अब इस रेवड़ी संस्कृति पर गंभीरता से चिंतन करने का वक्त आ गया है। जब तक अपने वादों पर खरा उतरने की कोई वैधानिक बाध्यता नहीं तय की जाती, तब तक सुप्रीम कोर्ट और चुनाव आयोग को इस तरह की घोषणाएं करने से राजनीतिक दलों को रोकना चाहिए। चुनाव प्रचार के दौरान वादे करते हुए राजनीतिक दलों का केवल राजनीतिक पहलू पर विचार करना बुद्धिमानी नहीं है। आर्थिक हिस्से को भी ध्यान में रखना जरूरी है, क्योंकि अंततः बजटीय आवंटन और संसाधन सीमित हैं। मुफ्त की बात करते समय राजनीति के साथ-साथ राष्ट्रीय हित एवं अर्थव्यवस्था को भी ध्यान में रखना चाहिए।

---

बिज़नेस स्टैंडर्ड

***Date: 26-08-24***

# प्रतिस्पर्धा बढ़ाए ई-कॉमर्स नीति

**संपादकीय**

ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्मों की वृद्धि और खुदरा क्षेत्र पर उनके संभावित प्रभाव को देखते हुए केंद्रीय वाणिज्य एवं उद्योग मंत्री पीयूष गोयल ने गत सप्ताह यह स्पष्ट किया कि सरकार ई-कॉमर्स के विरुद्ध नहीं है बल्कि वह ऑनलाइन और सामान्य खुदरा कारोबारियों के बीच स्वस्थ प्रतिस्पर्धा सुनिश्चित करने पर ध्यान केंद्रित करना चाहती है। उन्होंने इस बात को भी रेखांकित किया कि ऑनलाइन खुदरा कारोबारियों के लिए नियमों का पालन करना महत्त्वपूर्ण है। गोयल ने सरकार की स्थिति साफ करके अच्छा किया लेकिन ऑनलाइन बनाम ऑफलाइन खुदरा के मुद्दे पर बहस जारी रहेगी। सरकार को अपनी नीतियों में भी इस प्रकार बदलाव करने पड़ सकते हैं ताकि बाजार में होने वाली स्वाभाविक उथलपुथल और

गतिविधियां बाधित न हों।

नीतिगत नजरिये से देखा जाए तो यह समझना अहम है कि ई-कॉमर्स क्या कर रहा है और उसके क्या संभावित खतरे हैं। ग्राहकों के लिए ई-कॉमर्स ने चयन के विकल्प बढ़ाए हैं और खरीद को सरल बनाया है। कुछ ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्मों के गहन नेटवर्क और लॉजिस्टिक क्षमताओं के कारण छोटे शहरों और ग्रामीण भारत के उपभोक्ताओं की पहुंच उन उत्पादों तक हो सकी है जो पहले केवल बड़े शहरों में रहने वाले लोगों की पहुंच में थे। उत्पादक के नजरिये से देखें तो ऑनलाइन प्लेटफॉर्मों के साथ जुड़ाव ने पूरे देश को छोटे और मझोले उपक्रमों के लिए भी एक संभावित बाजार में बदल दिया है। ऑनलाइन और ऑफलाइन वेंडरों और उपभोक्ताओं के एक सर्वेक्षण के बाद पहले इंडिया फाउंडेशन ने एक रिपोर्ट जारी की है जिसमें क्रमश: 60 फीसदी और 52 फीसदी वेंडरों ने कहा कि ऑनलाइन बिक्री शुरू होने के बाद उनकी बिक्री और मुनाफा दोनों बढ़े हैं। जानकारी यह भी है कि वे अधिक लोगों को काम पर रख रहे हैं। ऐसे में यह स्पष्ट है कि ऑनलाइन प्लेटफॉर्म से जुड़े विक्रेता और उपभोक्ता दोनों को लाभ हुआ है।

बहरहाल, नीतिगत नजरिये से देखें तो दो प्राथमिक चिंताएं हो सकती हैं। पहली, अक्सर यह आरोप लगता रहा है कि कुछ ऑनलाइन प्लेटफॉर्म बहुत कम कीमत पर बेचने की रणनीति अपनाते हैं। इस तरह के व्यवहार की जांच जरूर की जानी चाहिए। वास्तव में ऐसे मामलों में प्रतिस्पर्धा नियामकों ने बड़े ऑनलाइन खुदरा कारोबारियों की जांच की है। बहरहाल, विशुद्ध कारोबारी नजरिये से देखा जाए तो ऑनलाइन कारोबारियों के ऐसा व्यवहार अपनाने की कोई तुक नहीं समझ में आती। आमतौर पर ऐसा व्यवहार छोटे बाजारों में अपनाया जाता है जहां सीमित प्रतिस्पर्धा हो। यहां मामला ऐसा नहीं है। दो बड़े विदेशी फंडिंग वाले ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्म अब ढेर सारे घरेलू प्लेटफॉर्मों के साथ प्रतिस्पर्धा कर रह हैं। इनमें कुछ ऐसे प्लेटफॉर्म भी हैं जिनका स्वामित्व देश के बड़े औद्योगिक घरानों के पास है। ध्यान रहे कि क्विक कॉमर्स यानी शीघ्र सामान पहुंचाने वाली सेवाएं अब जोर पकड़ रही हैं। ये भारी छूट वाली सेवाओं के मुकाबले तेजी से बढ़ रही हैं। इससे पता चलता है कि ऑनलाइन खुदरा कारोबार काफी प्रतिस्पर्धी है और यहां प्रवेश बाधा वैसी नहीं है जैसा पहले सोचा जाता था।

नीति निर्माताओं की दूसरी बड़ी चिंता रोजगार की हो सकती है। आमतौर पर बड़ी संख्या में लोग आजीविका के लिए आसपास की दुकानों पर निर्भर होते हैं। हालांकि ऑनलाइन खुदरा ने किराना दुकानों पर अधिक असर नहीं डाला है लेकिन उनकी इंटरनेट पहुंच के कारण आने वाले सालों में कुछ उथलपुथल हो सकती है। कुल खुदरा कारोबार में ई-कॉमर्स की हिस्सेदारी 8 फीसदी है और यह तेजी से बढ़ रही है, जैसा कि रिपोर्ट बताती हैं। यह ध्यान देने लायक है कि ऑनलाइन प्लेटफॉर्म के वेंडर अधिक लोगों को काम पर रखते हैं। इस क्षेत्र में रोजगार की प्रकृति में बदलाव आ सकता है। ऐसे में नीतिगत हस्तक्षेप करके यथास्थिति का बचाव नहीं किया जाना चाहिए। उम्मीद है कि सरकार जल्दी ही नई ई-कॉमर्स नीति लाएगी। यह सुनिश्चित होना चाहिए कि नीति स्वामित्व या निवेश के आधार पर भेदभाव न करते हुए सबके लिए समान हो। एक निष्पक्ष नीति से निवेश बढ़ेगा, रोजगार तैयार होंगे और उपभोक्ताओं का भी कल्याण होगा।

***Date: 26-08-24***

# आमदनी बढ़ाने में बांस की खेती होगी कारगर

**सुरिंदर सूद**

कभी 'गरीबों की लकड़ी' कहलाने वाला बांस अब किसानों के लिए रकम पैदा करने का जरिया बन गया है और इसीलिए उसे 'हरा सोना' कहा जाता है। आधुनिक तरीकों से इसकी खेती करना गन्ने और कपास जैसी कीमती फसलों से भी ज्यादा फायदेमंद साबित हो रहा है। इसमें किसानों की आमदनी बढ़ाने की संभावना देखते हुए सरकार ने राष्ट्रीय बांस मिशन और एकीकृत बागवानी विकास मिशन को नए सिरे से शुरू किया गया है, जिसके तहत देश के विभिन्न हिस्सों में बांस की खेती को बढ़ावा देने के लिए योजनाएं लागू की जा रही हैं।

इन योजनाओं में लकड़ी के विकल्प के रूप में विभिन्न क्षेत्रों में बांस का उपयोग बढ़ाने के उपाय शामिल हैं। साथ ही बांस और इससे बने उत्पादों के उत्पादन, देश में मार्केटिंग तथा निर्यात के लिए मूल्य श्रृंखला बनाने के उपाय भी किए जा रहे हैं। नीति आयोग का अनुमान है कि साल 2025 तक दुनिया में बांस का बाजार लगभग 98.3 अरब डॉलर का हो जाएगा। चीन के बाद भारत ही दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा बांस उत्पादक देश है और तेजी से बढ़ते वैश्विक बाजार में बड़ा हिस्सा हासिल करने की कोशिश कर रहा है। देश में बांस की 136 देसी किस्में होती हैं और इस बहुमूल्य तथा बहुउपयोगी पौधे का करीब 32.3 लाख टन सालाना उत्पादन होता है।

जंगली पौधे के बजाय कृषि फसल के रूप में बांस की खेती को बढ़ावा देने के लिए वर्ष 2017 में भारतीय वन अधिनियम में एक अहम संशोधन किया गया, जिसके तहत बांस को 'पेड़' के बजाय 'घास' की श्रेणी में डाल दिया गया। इससे पेड़ों और दूसरे वन उत्पादों की कटाई, ढुलाई तथा बिक्री पर लगे तमाम तरह के प्रतिबंध बांस से हट गए। वनस्पति विज्ञान में पौधों का वर्गीकरण भी इस कदम को सही ठहराता है, जिसमें बांस को घास के एक विशेष परिवार में रखा गया है। इसमें गेहूं, चावल, जई, राई, मक्का, ज्वार और बाजरा जैसी खाद्य फसलें भी इसी परिवार में आती हैं। अब बांस की खेती भी दूसरी फसलों की तरह की जा सकती है और इसे बेचने के लिए न तो किसी लाइसेंस की जरूरत पड़ती है और न ही वन विभाग या किसी अन्य सरकारी एजेंसी की इजाजत लेनी पड़ती है।

बांस प्राकृतिक रूप से पूर्वोत्तर भारत और पश्चिम बंगाल में होता है, जहां इसका दायरा तेजी से बढ़ रहा है। इसके साथ ही मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, अंडमान-निकोबार द्वीप समूह और पश्चिमी घाट जैसे इलाकों में भी इसकी खेती तेजी से फैल रही है। इस समय 1.57 करोड़ हेक्टेयर से भी ज्यादा भूमि पर बांस की खेती होने का अनुमान है। देश में उगने वाले कुल बांस का लगभग 50 फीसदी पूर्वोत्तर क्षेत्र में होता है।

मीडिया में हाल में आई खबरों के मुताबिक गुजरात में पिछले दो वर्षों में बांस किसानों की संख्या दोगुनी हो गई है। महाराष्ट्र सरकार ने 7 लाख रुपये प्रति हेक्टेयर प्रोत्साहन का ऐलान कर बांस की खेती का रकबा 10,000 हेक्टेयर तक बढ़ाने की योजना का ऐलान किया है। यह पहल पर्यावरण प्रदूषण पर अंकुश लगाकर कार्बन सिंक (कार्बन डाई ऑक्साइड सोखने वाले इलाके) बनाने की राज्य की रणनीति का हिस्सा है। बांस कार्बन डाई ऑक्साइड को ऑक्सीजन में बदलने में

बहुत कारगर होते हैं। कई अध्ययनों में पता चला है कि ज्यादातर पौधों की तुलना में बांस 35 फीसदी अधिक ऑक्सीजन का उत्पादन करता है।

खास बात है कि बांस दुनिया में सबसे तेजी से बढ़ने वाले पौधों में शामिल है। आम तौर पर यह एक ही दिन में 30 से 90 सेंटीमीटर (1 से 3 फुट) तक बढ़ जाता है, जिसके कारण यह बायोमास के सबसे कारगर उत्पादकों में से एक है। इस बायोमास का इस्तेमाल भोजन से ईंधन तक विभिन्न उत्पाद बनाने में किया जाता है। बांस की नई टहनियों से पूर्वोत्तर राज्यों में सब्जी बनाई जाती है या दूसरे स्थानीय व्यंजनों में इसका इस्तेमाल किया जाता है। बांस से बने खाद्य पदार्थ सेहतमंद माने जाते हैं क्योंकि इनमें फाइबर भरपूर होता है मगर कैलरी कम होती हैं। इनका स्वाद भी एकदम अलग होता है। बांस की जड़ समेत उसके कुछ हिस्से औषधि के रूप में इस्तेमाल किए जाते हैं। पूर्वोत्तर में इनका इस्तेमाल पारंपरिक उपचार में किया जाता है।

बांस को पर्यावरण के अनुकूल जैव ईंधन जैसे एथनॉल बनाया जा सकता है या इसकी लुगदी से कागज भी बनाया जा सकता है। मजबूती और लचीलेपन की वजह से निर्माण क्षेत्र में भी बांस का व्यापक उपयोग होता है, जहां इसकी मचानें खूब बनाई जाती हैं। इसके अलावा मेज, कुर्सी, पलंग जैसे फर्नीचर और दूसरे घरेलू सामान बनाने में भी इसका इस्तेमाल लगातार बढ़ रहा है क्योंकि यह हल्का, टिकाऊ होता है तथा बिल्कुल अलग दिखता है।

व्यावसायिक मकसद से खेती करने पर बांस को आम तौर पर बरसात के मौसम में रोपा जाता है। इसकी कलमों की रोपाई होती है। कटाई के बाद जो हिस्सा जमीन में बच जाता है, उससे भी नया बांस उग जाता है। पौधे को कटाई के लायक बनने में करीब 5 वर्ष लग जाते हैं। बांस की रोपाई के बाद शुरुआती दो-तीन वर्षों में इसके पौधों के बीच मौजूद जगह में हल्दी, मिर्च और अदरक जैसी कई फसल उगाई जा सकती हैं, जिनसे अतिरिक्त कमाई हो जाती है। एक हेक्टेयर रकबे में औसतन 30 से 35 टन बांस सालाना होता है।

बांस के बाग को अच्छी तरह संभाला जाए, ज्यादा उपज वाली किस्में लगाई जाएं, नकदी का इस्तेमाल हो और खेती की अच्छी पद्धति आजमाई जाएं तो उपज बढ़ भी सकती है। 'बीमा बांस' जैव प्रौद्योगिकी के जरिये तैयार की गई बांस की अधिक उपज वाली किस्म है, जो सबसे ज्यादा लोकप्रिय है। एक बांस आम तौर पर 100 रुपये में बिकता है। इस हिसाब से इसकी खेती करने वाले सालाना 75,000 से 80,000 रुपये प्रति हेक्टेयर शुद्ध लाभ कमा सकते हैं। इतना रिटर्न बहुत कम फसलों में मिल पाता है।

---

राष्ट्रीय सहारा

***Date: 26-08-24***

# सुनिश्चित पेंशन की गारंटी

संपादकीय

केंद्र सरकार ने पुरानी पेंशन योजना सरीखी यूनिफाइड पेंशन स्कीम (यूपीएस-एकीकृत पेंशन योजना) की शुक्रवार को घोषणा की। सुनिश्चित पेंशन की अरसे से सरकारी कर्मचारी मांग करते रहे हैं, जिनके दबाव में मोदी सरकार को यह फैसला करना पड़ा है। कांग्रेस सहित तमाम विपक्षी दलों ने भी बराबर दबाव बना रखा था। योजना के अनुसार कर्मचारी के रिटायर होने पर सेवानिवृत्ति के दिन से पहले के बारह महीने के औसत वेतनमान का 50 फीसद पेंशन के रूप सुनिश्चित मिलेगा। क्वालीफाइंग सर्विस 25 साल होगी। दस साल से 25 साल तक नौकरी करने वाले कर्मचारियों को उसी अनुपात में पेंशन मिलेगी। यूपीएस एक अप्रैल, 2025 से लागू होगी। मौजूदा एनपीएस भी जारी रहेगी। कर्मचारियों पर है कि दोनों में से कौन सा विकल्प चुनते हैं। एनपीएस वाले यूपीएस में जाते हैं तो उन्हें फायदा होगा। दरअसल, प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने तत्कालीन वित्त सचिव टीवी सोमनाथ की अध्यक्षता में एक समिति बनाई थी। समिति ने कर्मचारियों के कल्याण और सुरक्षित भविष्य के मद्देनजर पेंशन के मसले का गहनता से अध्ययन किया। समिति की सिफारिशों के आधार पर मोदी मंत्रिमंडल ने यूपीएस संबंधी फैसला किया है। अलबत्ता, फैसले की टाइमिंग को लेकर काफी कुछ कहा जा सकता है। सबसे पहले तो यही कि लोक सभा चुनाव में पार्टी को मिले झटके के बाद कई राज्यों में आने वाले असेंबली चुनावों में भाजपा कोई जोखिम नहीं लेना चाहती। हरियाणा और जम्मू-कश्मीर में तो असेंबली चुनाव का ऐलान भी हो चुका है। जल्द ही महाराष्ट्र और झारखंड में भी चुनाव होने हैं। 2024 के चुनाव में भाजपा के सदस्यों की संख्या 303 से गिरकर 240 पर रह गई थी। उसे अपने तईं स्पष्ट बहुमत की सरकार की बजाय सहयोगी दलों के साथ बने गठबंधन एनडीए की सरकार का नेतृत्व करना पड़ रहा है। 2024 में अपेक्षानुरूप प्रदर्शन न कर पाने के पीछे तमाम कारक गिनाए जा सकते हैं, लेकिन अग्निवीर, पुरानी पेंशन योजना (ओपीएस) और आरक्षण, किसानों के मुद्दे ऐसे रहे जिनके चलते भाजपा को झटका लगा। पेंशन का मुद्दा खासा संवेदनशील है, 23 लाख कर्मचारी (राज्य सरकार भी इसे लागू करती हैं तो संख्या 90 लाख हो जाएगी) यूपीएस से लाभान्वित होने हैं, जिनकी अनदेखी का जोखिम भारी पड़ सकता है। यूपीएस से सरकार ने मध्यम वर्ग को राहत देने की कोशिश की है, जिसका उसे चुनाव में फायदा होता दिख रहा है।

---

***Date: 26-08-24***

# वैश्विक शांति के लिए अहम

**प्रेम शुक्ल**

भारतीय सनातन संस्कृति में रची-बसी वसुधैव कुटुम्बकम की अवधारणा आज वैश्विक पटल पर परचम लहरा रही है। आज युक्रेन- रूस युद्ध में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की वसुधैव कुटुम्बकम आधारित विदेश नीति से वैश्विक शांति एवं जनकल्याण की बहाली की कवायद हो रही है। यूक्रेन - रूस युद्ध काल में प्रधानमंत्री मोदी का कीव पहुंच कर यूक्रेन के राष्ट्रपति वोलोदिमीर लेंस्की से मुलाकात करना वैश्विक शांति की दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम माना जा रहा है। यह दौरा इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है कि इससे पहले मोदी ने 8-9 जुलाई को मास्को में रूस के राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन से मुलाकात की थी।

युद्धकाल में प्रधानमंत्री का कीव पहुंचना इसलिए भी महत्त्वपूर्ण माना जा रहा है कि यूएसएसआर से टूटकर यूक्रेन देश बनने के बाद पहली बार भारत के किसी प्रधानमंत्री का यूक्रेन दौरा है। 2022 में यूक्रेन - रूस युद्ध शुरू होने के बाद से प्रधानमंत्री मोदी कई वैश्विक मंच से दोनों देशों को संदेश देते रहे हैं, 'यह युग युद्ध का युग नहीं है। भारत शांति और स्थिरता की जल्द बहाली के लिए डायलॉग और डिप्लोमेसी का समर्थन करता है। किसी भी संकट में मासूम लोगों की जान हानि पूरी मानवता के लिए सबसे बड़ी चुनौती बन गई है।' मानवता पर हो रहे अघात पर वह देश चुप नहीं बैठ सकता है जो वसुधैव कुटुम्बकम आधारित विदेश नीति को लेकर वैश्विक शांति, जनकल्याण और विकास के लिए काम करता रहा है।

2014 में सत्ता संभालने के बाद ही प्रधानमंत्री मोदी ने भारत की विदेश नीति को लेकर स्पष्ट कर दिया था। उन्होंने कहा था, 'एक वक्त वह था, जब हम समुंदर किनारे लहरें गिना करते थे, लेकिन अब वक्त आ गया है हम पतवार लेकर समुंदर में खुद उतरें।' उन्होंने स्पष्ट कर दिया था कि वसुधैव कुटुम्बकम की अवधारणा को लेकर चले हैं तो अपने घर में शांति और सद्भाव से बैठ कर काम नहीं चलेगा, बल्कि उसे साकार करने के लिए हर संभव प्रयास करना होगा। मानवता की खातिर आज मोदी युद्धग्रस्त पहुंच गए। भारत यूक्रेन से द्विपक्षीय संबंधों को बेहतर बनाने की दिशा में निरंतर काम करता रहा है। दिसम्बर, 1991 में यूक्रेन को संप्रभु एवं स्वतंत्र देश की मान्यता मिलने के बाद मई, 1992 में कीव में भारतीय दूतावास खोला गया। द्विपक्षीय संबंधों को बेहतर बनाने की दिशा में भारत ने यूक्रेन से आर-27 एयर-टू-एयर मिसाइल समेत अन्य हथियार आयात किए। एशिया-प्रशांत क्षेत्र में यूक्रेन का पांचवा सबसे बड़ा निर्यात गंतव्य भारत बना । भारत द्वारा यूक्रेन को दवाओं का निर्यात करना भी जारी रहा। यूक्रेन में 30 से अधिक यूक्रेनी संस्कृति संघ / समूह भारतीय नृत्य को बढ़ावा देने के लिए कार्य करते हैं। इसके बावजूद यूक्रेन ने कई मामलों में भारत का साथ नहीं दिया। 1998 में तत्कालीन प्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी की सरकार में जब भारत ने परमाणु परीक्षण किया तो यूक्रेन ने 25 देशों के साथ मिल कर भारत के परमाणु शक्ति बनने का विरोध किया। के यूक्रेन पड़ोसी देश पाकिस्तान को हथियारों की आपूर्ति करता रहा जो पाकिस्तान आतंकवाद को बढ़ावा देने में लगा रहा। आतंकवाद के मामले में यूक्रेन कई बार पाकिस्तान के पक्ष में खड़ा रहा, जिस पर भारत कई बार आपत्ति भी दर्ज करा चुका है। कश्मीर में पाक समर्थित आतंकवाद का मामला हो या पाक में आतंकियों को मिलने वाली मदद के मामले में यूक्रेन ने कभी भी भारत का साथ नहीं दिया। लेकिन, मानवता एवं विश्व बंधुत्व की भावना को लेकर भारत को सशक्त राष्ट्र बनाने वाले प्रधानमंत्री मोदी यूक्रेन- रूस युद्ध के खिलाफ रहे । मोदी की कूटनीति में भू- राजनीतिक स्तर पर भारत तेजी से ताकतवर बना है। यूक्रेन - रूस युद्ध शुरू होने के बाद से अब तक भारत दोनों में से किसी के भी साथ खड़ा नजर नहीं आया। रूस दौरे के दौरान पीएम मोदी के राष्ट्रपति पुतिन से गले मिलने की जम कर आलोचना की गई थी। मगर पीएम मोदी कीव पहुंच कर राष्ट्रपति जेलेंस्की के साथ कीव में भारत नेशनल म्यूजियम गए और जंग में मारे गए बच्चों को श्रद्धांजलि दी। फोमिन बॉटेनिकल गार्डन में पीएम मोदी ने महात्मा गांधी की प्रतिमा पर श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए विश्व को एक बार फिर 'अहिंसा' का पाठ याद दिलाया। मोदी ने एक्स पर लिखा, 'बापू की प्रतिमा पूरी दुनिया में है। यह लाखों लोगों को उम्मीद देती है। बापू ने इंसानियत का जो रास्ता दिखाया है, उस पर हम सब को चलना चाहिए।'

ये बातें भले ही छोटी लग सकती हैं, लेकिन भू-राजनीति में बड़े बदलाव के संकेत दे रही हैं। जिस तरह से पीएम मोदी ने राष्ट्रपति जेलेंस्की के कंधे पर हाथ रखकर जंग में मारे गए बच्चों की याद में लगी प्रदर्शनी देखी, उससे स्पष्ट हो गया कि भारत मानवता को चुनौती देने वाली हर समस्या का समाधान निकालने में योगदान देगा। पीएम मोदी और राष्ट्रपति जेलेंस्की की द्विपक्षीय वार्ता का परिणाम भले ही तुरंत न दिखे, किंतु इसका दीर्घकालीक परिणाम यूरोशिया पर पड़ेगा, जो शांति और मानवता की बेहतरी के लिए होगा। दीर्घकालिक परिणाम हो या त्वरित परिणाम, इस प्रकार की विदेश

नीति भारत के लिए कोई नई नहीं है। प्रधानमंत्री मोदी की विदेश नीति में भारत के मान-सम्मान के साथ हर देश से आंख में आंख डाल कर बातचीत करना और मित्रता बनाए रखना है। पीएम मोदी एक तरफ रूस से एस-400 मिसाइल खरीदते हैं, और दूसरी ओर अमेरिका से सेमीकंडक्टर चिप बनाने की तकनीक एवं उत्पादन में सहयोग भी प्राप्त करते हैं, जबकि दोनों देश परस्पर घोर विरोधी हैं। प्रधानमंत्री मोदी इस्राइल भी गए और फिलिस्तीन भी, ईरान भी गए और इस्राइल भी, जबकि ये देश परस्पर कट्टर विरोधी हैं, किंतु भारत के इन देशों से अच्छे संबंध हैं। सशक्त हाथों से पतवार थामे समुंदर की लहरों पर आगे बढ़ने का परिणाम है कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी विश्व में लोकप्रिय नेता होने के साथ ही सर्वमान्य नेता के रूप में स्वीकारे जाने लगे हैं। मोदी की वैश्विक नेतृत्व क्षमता का ही परिणाम है कि उनके यूक्रेन दौरे के दौरान रूस ने 8 घंटे का सीजफायर कर दिया। तभी तो संयुक्त राष्ट्र के महासचिव एंटोनी गुटरेस भी प्रधानमंत्री मोदी के यूक्रेन दौरे को लेकर आशान्वित हैं। उन्होंने यहां तक कहा, 'पीएम मोदी का यूक्रेन दौरा शांति लाने में मददगार साबित होगा। हमें उम्मीद है कि ये यात्राएं असर दिखाएंगी।' सिर्फ संयुक्त राष्ट्र ही नहीं, बल्कि अमेरिका और यूरोप के राष्ट्राध्यक्ष भी प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की यात्रा पर टकटकी लगाए रहे। भारत में कही जाने वाली बातों पर अब दुनिया भरोसा करने लगी है कि 'मोदी हैं तो मुमकिन है।'

---